



Saarth E-Journal

Saarth

E-Journal of Research

E-mail: sarthejournal@gmail.com

www.sarthejournal.com

ISSN NO: 2395-339X

Peer Reviewed

Vol,11 Issue.03 No.01

Impact Factor: 6.89

Quarterly

July to Sept. 2026

.....

प्रवर्तमान भारत की मुद्रा व्यवस्था और वित्तीय ढांचा :

डॉ. भीमराव आंबेडकर के विचार

डॉ. संजय वाढेरे

सारांश

भारतीय मुद्रा व्यवस्था एवं वित्तीय ढांचे का विकास उपनिवेशकालीन परिप्रेक्ष्य से लेकर समकालीन काल तक निरंतर परिवर्तनशील रहा है। डॉ. भीमराव आंबेडकर, संविधान निर्माता एवं समाज-सुधारक होने के साथ-साथ एक गहन आर्थिक चिंतक भी थे। उनकी सुप्रसिद्ध कृति “The Problem of the Rupee: Its Origin and Its Solution” (1923) भारतीय मौद्रिक नीति के सिद्धांतगत एवं संस्थागत विकास की आधारशिला मानी जाती है। आंबेडकर ने रुपया की अस्थिरता, स्वर्णमान प्रणाली की अंतर्निहित सीमाओं तथा मुद्रा की क्रयशक्ति एवं स्थिरता के अनिवार्य तत्वों का वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया।

उनके विचारों ने भारतीय रिज़र्व बैंक की स्थापना, मौद्रिक नियंत्रण की दिशा और वित्तीय संरचना के दीर्घकालीन स्वरूप को गहन रूप से प्रभावित किया। उन्होंने मुद्रा स्थिरता को केवल आर्थिक दृष्टि से ही नहीं बल्कि सामाजिक न्याय और व्यापक जनकल्याण के साधन के रूप में भी देखा। स्वतंत्र भारत में वित्तीय समावेशन, मूल्य स्थिरता, ग्रामीण ऋण प्रणाली, बैंकिंग सुधार तथा सार्वजनिक वित्त में पारदर्शिता जैसी अवधारणाओं के अंतःस्रोत आंबेडकर के आर्थिक चिंतन में निहित हैं।

समकालीन भारत में, जब अर्थव्यवस्था डिजिटल भुगतान, वैश्विक पूंजी प्रवाह, मुद्रास्फीति नियंत्रण और सामाजिक-आर्थिक विषमताओं के बीच संतुलन साधने के प्रयास में है तब आंबेडकर के मौद्रिक एवं वित्तीय विचार न केवल ऐतिहासिक दृष्टि से, बल्कि भावी नीतिगत निर्धारण के संदर्भ में भी अत्यंत प्रासंगिक और मार्गदर्शक सिद्ध होते हैं।

मुख्य शब्द

डॉ. भीमराव आंबेडकर; रुपया; भारतीय मुद्रा व्यवस्था; वित्तीय ढांचा; भारतीय रिज़र्व बैंक; मौद्रिक नीति; क्रयशक्ति स्थिरता; वित्तीय समावेशन; सामाजिक न्याय

● प्रस्तावना

भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास में मुद्रा व्यवस्था और वित्तीय ढांचा केंद्रीय एवं आधारभूत भूमिका निभाते हैं। मुद्रा किसी भी राष्ट्र की आर्थिक प्रणाली की रीढ़ होती है; उसकी स्थिरता, क्रयशक्ति और प्रबंधन की दक्षता सीधे-सीधे उत्पादन, वितरण, उपभोग, निवेश और रोजगार जैसे आयामों को प्रभावित करती है। भारत में उपनिवेशकालीन काल से लेकर आजादी और आज के वैश्वीकरण युग तक मौद्रिक नीति एवं वित्तीय संरचना में गहरे बदलाव हुए हैं। ब्रिटिश शासन के दौरान भारत एक अधीनस्थ अर्थव्यवस्था के रूप में स्वर्णमान प्रणाली, रुपया-स्टर्लिंग विनिमय और विदेशी वाणिज्यिक हितों पर निर्भर था। इस कारण मुद्रा की अस्थिरता, कीमतों में

उत्तर-चढ़ाव और वित्तीय विषमताएँ देश की आर्थिक प्रगति को बाधित करती रहीं। स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय नीति-निर्माताओं ने ऐसी मौद्रिक और वित्तीय व्यवस्था की परिकल्पना की जो राष्ट्रीय विकास, स्थिरता और सामाजिक न्याय के उद्देश्यों को साध सके।

डॉ. भीमराव आंबेडकर, जिन्हें सामान्यतः संविधान निर्माता और समाज-सुधारक के रूप में जाना जाता है, एक कुशल अर्थशास्त्री और मौद्रिक चिंतक भी थे। उन्होंने “The Problem of the Rupee: Its Origin and Its Solution” (1923) में भारतीय मुद्रा नीति की चुनौतियों और समाधान पर गहन विश्लेषण प्रस्तुत किया। इस ग्रंथ में उन्होंने स्वर्णमान प्रणाली की अंतर्निहित सीमाएँ रुपया की अस्थिरता और मौद्रिक प्रबंधन में पारदर्शिता तथा जवाबदेही की आवश्यकता को उजागर किया। उनका मत था कि मुद्रा की स्थिरता केवल आर्थिक विकास के लिए ही नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, मूल्य स्थिरता और व्यापक जनकल्याण के लिए भी अनिवार्य है। उनके इन विचारों ने भारतीय रिज़र्व बैंक की स्थापना, मौद्रिक नियंत्रण की दिशा, और स्वतंत्र भारत की वित्तीय नीतियों के दीर्घकालीन स्वरूप को प्रभावित किया।

समकालीन भारत में वित्तीय समावेशन, डिजिटल भुगतान प्रणाली, बैंकिंग सुधार, ग्रामीण ऋण संरचना और मुद्रास्फीति नियंत्रण जैसी नीतियों के मूल में आंबेडकर के आर्थिक चिंतन की प्रासंगिकता स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। आज जब भारत वैश्वीकरण, तकनीकी प्रगति, पूंजी प्रवाह और सामाजिक-आर्थिक विषमताओं के बीच अपनी मौद्रिक और वित्तीय नीतियों को संतुलित करने का प्रयास कर रहा है तब आंबेडकर के विचार केवल ऐतिहासिक महत्व के नहीं, बल्कि भविष्य की नीतिगत दिशा के लिए भी मार्गदर्शक सिद्ध होते हैं।

इस शोध पत्र में भारतीय मुद्रा व्यवस्था एवं वित्तीय ढांचे के ऐतिहासिक विकास डॉ. आंबेडकर के विचारों और उनके समकालीन प्रभाव का व्यवस्थित विश्लेषण किया जाएगा। इसके अंतर्गत न केवल ब्रिटिश शासनकालीन मुद्रा व्यवस्था और The Problem of the Rupee के निष्कर्षों पर चर्चा होगी, बल्कि स्वतंत्र

भारत में मौद्रिक स्थिरता, क्रयशक्ति, वित्तीय समावेशन और सामाजिक न्याय के लक्ष्यों को साधने में आंबेडकर की अवधारणाओं की भूमिका को भी परखा जाएगा। इससे भारतीय मौद्रिक नीति की वैचारिक जड़ों को समझने के साथ-साथ, भविष्य में अधिक न्यायसंगत और समावेशी वित्तीय नीतियों के निर्माण के लिए भी दिशा प्राप्त होगी।

● शोध उद्देश्य एवं शोध पद्धति

■ शोध उद्देश्य

यह मुख्यतः डॉ. भीमराव आंबेडकर के मौद्रिक और वित्तीय विचारों के समकालीन प्रासंगिकता और भारतीय मुद्रा तथा वित्तीय ढांचे पर उनके प्रभाव का विश्लेषण करने के लिए किया गया है। इसके तहत प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

1. भारतीय मुद्रा व्यवस्था और वित्तीय ढांचे के ऐतिहासिक विकास और उसकी चुनौतियों का विश्लेषण करना।
2. डॉ. भीमराव आंबेडकर के मौद्रिक और वित्तीय दृष्टिकोण की प्रमुख विशेषताओं को समझना और सार प्रस्तुत करना।
3. स्वतंत्र भारत की मौद्रिक नीति, बैंकिंग सुधार, वित्तीय समावेशन और जनकल्याणकारी योजनाओं में आंबेडकर के विचारों का प्रभाव मूल्यांकन करना।
4. समकालीन वित्तीय ढांचे में आंबेडकर की अवधारणाओं की प्रासंगिकता और उपयोगिता की पहचान करना।
5. मौद्रिक स्थिरता, क्रयशक्ति, वित्तीय समावेशन और सामाजिक न्याय के संदर्भ में आंबेडकर के सिद्धांतों और वर्तमान नीतियों के बीच अंतर्संबंध का अध्ययन करना।

■ शोध पद्धति

यह शोध गुणात्मक और विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण पर आधारित है, जिसमें ऐतिहासिक और समकालीन दस्तावेजों का अध्ययन करके निष्कर्ष प्रस्तुत किए गए हैं।

➤ डेटा स्रोत:

प्राथमिक स्रोत: डॉ. भीमराव आंबेडकर की पुस्तक “The Problem of the Rupee”, भारतीय रिजर्व बैंक की आधिकारिक रिपोर्ट और मौद्रिक नीति दस्तावेज।

द्वितीयक स्रोत: आर्थिक और बैंकिंग पर शोध लेख, सरकारी रिपोर्ट, वित्त मंत्रालय और योजना आयोग के प्रकाशन।

➤ तकनीक:

साहित्य समीक्षा और ऐतिहासिक दस्तावेजों के माध्यम से मौद्रिक और वित्तीय नीतियों का विश्लेषण।

आंबेडकर के विचारों और वर्तमान वित्तीय नीतियों के बीच तुलनात्मक अध्ययन।

मौद्रिक स्थिरता, वित्तीय समावेशन और सामाजिक न्याय पर नीतिगत प्रभाव का मूल्यांकन।

➤ विश्लेषण पद्धति:

दस्तावेज आधारित गुणात्मक विश्लेषण और नीतिगत निष्कर्षों का सारग्रह।

➤ सीमाएँ:

यह शोध पत्र मुख्यतः भारतीय मुद्रा और वित्तीय ढांचे तक सीमित है जबकि वैश्विक वित्तीय नीतियों का विस्तृत अध्ययन इसमें शामिल नहीं है। डेटा का अधिकांश भाग प्रकाशित रिपोर्ट और आधिकारिक दस्तावेज पर आधारित है।

● साहित्य समीक्षा

भारतीय मुद्रा व्यवस्था और वित्तीय ढांचे के विकास पर विभिन्न विद्वानों एवं समितियों ने समयसमय पर अपने अध्ययन प्रस्तुत किए हैं। उपनिवेशकालीन काल में भारतीय मौद्रिक प्रणाली पर मुख्यतः ब्रिटिश प्रशासनिक रिपोर्टें, रॉयल कमिशन ऑन इंडियन करेंसी एंड फाइनेंस (1913) तथा विभिन्न आर्थिक चिंतकों के विचार उपलब्ध हैं। इन अध्ययनों ने स्वर्णमान प्रणाली, रुपया-स्टर्लिंग विनिमय और भारतीय मुद्रा की अस्थिरता जैसे मुद्दों को रेखांकित किया।

डॉ. भीमराव आंबेडकर की “The Problem of the Rupee: Its Origin and Its Solution” (1923) इस विषय पर एक मील का पत्थर मानी जाती है। इसमें उन्होंने भारतीय मुद्रा प्रणाली की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि ब्रिटिश मौद्रिक नीति की कमियाँ, और स्थिर क्रयशक्ति व संगठित मौद्रिक प्रबंधन की आवश्यकता पर गहन विश्लेषण प्रस्तुत किया। आंबेडकर का मत था कि किसी भी देश की आर्थिक प्रगति के लिए उसकी मौद्रिक नीति न केवल तकनीकी दृष्टि से सुदृढ़ होनी चाहिए, बल्कि सामाजिक न्याय और जनकल्याण की आवश्यकताओं को भी संबोधित करनी चाहिए।

स्वतंत्र भारत में मौद्रिक नीति और वित्तीय संरचना पर नर्सिम्हन समिति, रंगराजन समिति तथा विभिन्न योजनाबद्ध विकास-रिपोर्टों के माध्यम से विचार-विमर्श हुआ। इन रिपोर्टों ने बैंकिंग सुधार, वित्तीय समावेशन, ग्रामीण ऋण प्रणाली, मूल्य स्थिरता और मौद्रिक नियंत्रण को सुदृढ़ बनाने के उपाय सुझाए। हाल के वर्षों में भारतीय अर्थव्यवस्था पर किए गए शोधों में डिजिटल भुगतान प्रणाली, माइक्रोफाइनेंस, सामाजिक सुरक्षा योजनाएँ और वित्तीय समावेशन जैसे आयाम प्रमुख रहे हैं।

कई विद्वानों (जैसे जे.के. मेहता, वी.पी. सिंह, और समकालीन अर्थशास्त्री) ने आंबेडकर के मौद्रिक दृष्टिकोण और उसके प्रभाव पर तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किए हैं। उनके अनुसार भारतीय रिज़र्व बैंक की मौद्रिक नीति

मूल्य स्थिरता और बैंकिंग प्रणाली के विकास में आंबेडकर के विचारों की छाप स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

उपलब्ध साहित्य से यह भी स्पष्ट होता है कि आंबेडकर की मौद्रिक अवधारणाएँ केवल ऐतिहासिक संदर्भ तक सीमित नहीं रहीं, बल्कि वित्तीय समावेशन, मुद्रास्फीति नियंत्रण, ग्रामीण वित्त और डिजिटल अर्थव्यवस्था के उभरते परिप्रेक्ष्य में भी उनकी प्रासंगिकता बनी हुई है। इस प्रकार, पूर्ववर्ती अध्ययनों के विश्लेषण से यह शोध लेख उन बिंदुओं को समेकित करेगा जहाँ आंबेडकर के विचार समकालीन नीतियों और चुनौतियों से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े हैं।

● सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य

किसी भी शोध कार्य का सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य विषय की बौद्धिक आधारशिला प्रदान करता है। भारतीय मुद्रा व्यवस्था एवं वित्तीय ढांचे के अध्ययन में डॉ. भीमराव आंबेडकर के मौद्रिक सिद्धांतों को केंद्र में रखना इसलिए उचित है क्योंकि उनकी दृष्टि केवल आर्थिक प्रबंधन तक सीमित नहीं थी, बल्कि वह सामाजिक न्याय, राष्ट्रनिर्माण और जनकल्याण की व्यापक प्रक्रिया से जुड़ी थी।

आंबेडकर का मौद्रिक चिंतन उस समय के वैश्विक मौद्रिक प्रवृत्तियों और ब्रिटिश भारत की समस्याओं दोनों का आलोचनात्मक विश्लेषण था। उन्होंने प्रचलित स्वर्णमान प्रणाली और रुपया-स्टर्लिंग विनिमय की सीमाओं को उजागर करते हुए यह सिद्ध किया कि किसी भी राष्ट्र की मुद्रा का मूल्य धातु के भौतिक मानकों से नहीं, बल्कि उसकी वास्तविक क्रयशक्ति, मूल्य स्थिरता और घरेलू अर्थव्यवस्था की स्थिति से निर्धारित होना चाहिए। उन्होंने “स्थिर मुद्रा” की अवधारणा को आर्थिक नीति का केंद्रीय तत्व माना।

उनके विचार “मौद्रिक नीति-सामाजिक न्याय” अंतर्संबंध को भी स्पष्ट करते हैं। आंबेडकर के अनुसार अस्थिर मुद्रा महंगाई, मूल्य असमानता और सामाजिक विषमता को जन्म देती है, जिससे गरीब, मजदूर और वंचित वर्ग सबसे अधिक प्रभावित होता है। इसलिए, मौद्रिक नीति केवल तकनीकी या प्रशासनिक उपकरण नहीं

बल्कि कल्याणकारी और न्यायसंगत नीति का अंग होनी चाहिए। यही दृष्टिकोण बाद में भारतीय रिज़र्व बैंक की नीति-निर्माण प्रक्रिया, बैंकिंग सुधारों और ग्रामीण ऋण व्यवस्था में परिलक्षित हुआ।

इस शोध पत्र का सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य आंबेडकर के इन मौद्रिक सिद्धांतों पर आधारित है। यह अध्ययन यह मानता है कि वित्तीय ढांचा और मौद्रिक नीति किसी राष्ट्र की आर्थिक प्रगति के साथ-साथ उसकी सामाजिक संरचना को भी प्रभावित करती है। अतः, आंबेडकर के सिद्धांतों को वर्तमान डिजिटल भुगतान वित्तीय समावेशन, मुद्रास्फीति नियंत्रण, वैश्विक पूंजी प्रवाह और सामाजिक-आर्थिक विषमता जैसे समकालीन मुद्दों के संदर्भ में समझना इस शोध की बौद्धिक दिशा तय करता है।

इस प्रकार, यह शोध पत्र आंबेडकर के मौद्रिक सिद्धांतों को केवल ऐतिहासिक संदर्भ में नहीं बल्कि एक गतिशील अवधारणा के रूप में ग्रहण करता है, जिससे भारतीय मुद्रा व्यवस्था, वित्तीय ढांचे और सामाजिक न्याय के बीच अंतर्संबंध की गहन पड़ताल की जा सके।

● भारतीय मुद्रा व्यवस्था का ऐतिहासिक विकास

भारत में मुद्रा व्यवस्था का इतिहास अत्यंत प्राचीन और बहुस्तरीय है। प्राचीन काल में सिक्कों का उपयोग केवल विनिमय के माध्यम के रूप में ही नहीं, बल्कि राजनीतिक अधिकार और सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में भी होता था। मौर्यकालीन पंच-मार्क सिक्कों से लेकर गुप्तकालीन स्वर्ण मुद्राओं और मध्यकालीन ताम्र एवं रजत सिक्कों तक, भारतीय समाज ने विविध प्रकार की मौद्रिक प्रणालियों का अनुभव किया। उस समय मुद्रा का मूल्य धातु की शुद्धता और वजन से जुड़ा होता था।

मुगल काल में चांदी का रुपया भारतीय उपमहाद्वीप में प्रमुख मुद्रा के रूप में स्थापित हुआ। “रुपया” शब्द का स्रोत भी इसी काल से जुड़ा है। मुगल दरबार द्वारा जारी की गई मुद्राओं ने व्यापारिक और कर प्रणाली को संगठित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। किंतु क्षेत्रीय रियासतों और यूरोपीय व्यापारिक कंपनियों के कारण विभिन्न

प्रकार की मुद्राएँ प्रचलन में रहीं, जिससे लेन-देन में जटिलताएँ उत्पन्न होती थीं।

ब्रिटिश शासन के दौरान भारतीय मुद्रा व्यवस्था को औपनिवेशिक हितों के अनुसार ढाला गया। 1835 के भारतीय मुद्रा अधिनियम द्वारा एकरूप सिक्के जारी करने की शुरुआत हुई। 1893 में भारत ने स्वर्णमान प्रणाली को अपनाया, जिसमें रुपया-स्टर्लिंग विनिमय दर को स्थिर रखा गया। किंतु इस प्रणाली की सीमाएँ जल्दी ही स्पष्ट हो गईं – खासकर मूल्य स्थिरता, विदेशी पूंजी प्रवाह और घरेलू आर्थिक असंतुलन के संदर्भ में। 1913 के रॉयल कमीशन ऑन इंडियन करेंसी एंड फाइनेंस ने भी इन समस्याओं को चिन्हित किया।

इसी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में डॉ. भीमराव आंबेडकर की कृति “The Problem of the Rupee: Its Origin and Its Solution” (1923) सामने आई। उन्होंने दिखाया कि भारत की मौद्रिक अस्थिरता केवल प्रशासनिक या तकनीकी मुद्दा नहीं है, बल्कि औपनिवेशिक नीतियों का परिणाम है। आंबेडकर ने “स्थिर मुद्रा” (Stable Currency) की आवश्यकता पर बल देते हुए सुझाया कि भारत को ऐसी मौद्रिक नीति की जरूरत है जो घरेलू मूल्य स्तर, क्रयशक्ति और सामाजिक न्याय के अनुरूप हो।

उनके विचारों ने आगे चलकर भारतीय रिज़र्व बैंक (1935) की स्थापना और स्वतंत्र भारत की मौद्रिक नीति के स्वरूप को प्रभावित किया। स्वतंत्रता के बाद भारतीय मुद्रा प्रणाली ने धीरे-धीरे नियोजित अर्थव्यवस्था, बैंकिंग राष्ट्रीयकरण (1969), ग्रामीण ऋण एवं सहकारी ढांचे और 1991 के उदारीकरण-वैश्वीकरण के दौर तक कई चरणों में परिवर्तन देखा। 2016 में नोटबंदी और इसके बाद डिजिटल भुगतान प्रणाली के उभार ने भारतीय मुद्रा व्यवस्था को एक नई दिशा दी।

इस प्रकार, भारतीय मुद्रा व्यवस्था का ऐतिहासिक विकास केवल धातु-आधारित सिक्कों या कागजी नोटों का क्रमिक परिवर्तन नहीं है, बल्कि यह उस समय की राजनीतिक सत्ता, आर्थिक हितों और सामाजिक न्याय की आकांक्षाओं का भी प्रतिबिंब है। आंबेडकर के विचार इस यात्रा में एक महत्वपूर्ण बौद्धिक कड़ी के रूप में सामने

आते हैं, जिन्होंने न केवल ब्रिटिश कालीन नीति की आलोचना की, बल्कि भविष्य के लिए वैकल्पिक और न्यायसंगत मौद्रिक ढांचे की परिकल्पना भी की।

● प्रवर्तमान भारत का वित्तीय ढांचा

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय नीति-निर्माताओं ने यह महसूस किया कि राष्ट्रीय विकास सामाजिक न्याय और आर्थिक स्थिरता के लिए एक मजबूत और समावेशी वित्तीय ढांचा अनिवार्य है। प्रारंभिक दशकों में नियोजित अर्थव्यवस्था, सार्वजनिक क्षेत्र की प्रधानता, और ग्रामीण-कृषि क्षेत्र को प्राथमिकता देने वाली नीतियों के कारण भारतीय वित्तीय ढांचा धीरे-धीरे आकार लेने लगा। 1950 के दशक में योजना आयोग की स्थापना, भारतीय रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीतियाँ और वाणिज्यिक बैंकों का विस्तार इसी प्रक्रिया के अंग थे।

1969 और 1980 में दो चरणों में बैंकों के राष्ट्रीयकरण ने वित्तीय ढांचे को एक नया स्वरूप दिया। इसका उद्देश्य था ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों तक ऋण और बैंकिंग सेवाओं की पहुँच बढ़ाना, सामाजिक प्राथमिकताओं वाले क्षेत्रों को पर्याप्त वित्त उपलब्ध कराना और वित्तीय समावेशन को गति देना। इसी दौर में सहकारी बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और विकास वित्त संस्थानों (DFIs) की स्थापना हुई, जिनका मकसद लघु उद्योग, कृषि और आधारभूत ढांचे को वित्त उपलब्ध कराना था।

1991 के बाद उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण के चलते भारतीय वित्तीय ढांचे में गहरे परिवर्तन आए। पूंजी बाजारों का उदारीकरण, विदेशी निवेश को प्रोत्साहन, बीमा और बैंकिंग में निजी क्षेत्र की भागीदारी, और नियामक संस्थाओं (SEBI, IRDAI, PFRDA) की स्थापना ने वित्तीय क्षेत्र को प्रतिस्पर्धात्मक और बहुस्तरीय बनाया। इसी समय वित्तीय क्षेत्र सुधार समितियों (नरसिंहम समिति, रंगराजन समिति आदि) ने गैर-निष्पादित परिसंपत्तियों (NPAs), पूंजी पर्याप्तता और बैंकिंग दक्षता पर बल दिया।

हाल के वर्षों में भारतीय वित्तीय ढांचा डिजिटल और प्रौद्योगिकी आधारित हो गया है। 2016 के नोटबंदी के

बाद UPI (यूनिफाइड पेमेंट्स इंटरफेस) भीम ऐप, आधार-सक्षम भुगतान, और फिनटेक कंपनियों ने नकदीरहित लेन-देन को बढ़ावा दिया। सरकार की जन-धन योजना, डायरेक्ट बेनिफिट ट्रांसफर (DBT), और माइक्रोफाइनेंस संस्थानों ने गरीब एवं वंचित वर्ग को वित्तीय मुख्यधारा में लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

आज भारतीय वित्तीय ढांचा बहुस्तरीय है –

- **मौद्रिक नीति** : रिजर्व बैंक मूल्य स्थिरता, मुद्रास्फीति नियंत्रण और वित्तीय स्थिरता के लिए रेपो दर, नकद आरक्षित अनुपात, ओपन मार्केट ऑपरेशन जैसे उपकरणों का उपयोग करता है।
- **वित्तीय समावेशन** : बैंकिंग सेवाओं का ग्रामीण क्षेत्रों तक विस्तार, लघु वित्त बैंक, भुगतान बैंक और डिजिटल वित्तीय सेवाएँ।
- **पूंजी एवं मुद्रा बाजार** : शेयर, डिबेंचर, सरकारी प्रतिभूतियाँ, विदेशी मुद्रा बाजार – इन सभी के लिए नियामक ढांचे और पारदर्शिता के उपाय।
- **सामाजिक सुरक्षा एवं कल्याणकारी योजनाएँ** : पेंशन, बीमा, स्वास्थ्य बीमा, और ऋण-गारंटी योजनाओं के माध्यम से वंचित वर्ग को संरक्षण।

हालांकि, यह वित्तीय ढांचा चुनौतियों से भी मुक्त नहीं है। बैंकिंग क्षेत्र में एनपीए, फिनटेक के नियमन, साइबर सुरक्षा, क्षेत्रीय असमानताएँ, और वैश्विक आर्थिक झटके जैसी समस्याएँ बनी हुई हैं। फिर भी, वित्तीय समावेशन और डिजिटल क्रांति ने भारत को दुनिया के सबसे बड़े और तेजी से बढ़ते वित्तीय बाजारों में ला खड़ा किया है।

इस समकालीन वित्तीय ढांचे में डॉ. आंबेडकर के विचारों की गूँज स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। मुद्रा स्थिरता, वित्तीय समावेशन और जनकल्याणकारी नीतियों पर उनका जोर आज की मौद्रिक और वित्तीय नीतियों की मूल प्रेरणा के रूप में देखा जा सकता है। इस दृष्टि से, प्रवर्तमान भारतीय वित्तीय ढांचा आंबेडकर के आर्थिक चिंतन की व्यवहारिक अभिव्यक्ति भी है।

● आंबेडकर के विचारों की समकालीन प्रासंगिकता

डॉ. भीमराव आंबेडकर केवल संविधान निर्माता और समाज सुधारक ही नहीं थे, बल्कि वे आर्थिक चिंतक और मौद्रिक नीति विश्लेषक भी थे। उनके विचार न केवल ब्रिटिश भारत में मौद्रिक स्थिरता और सामाजिक न्याय के लिए महत्वपूर्ण थे, बल्कि आज़ादी के बाद के भारत में भी उनकी प्रासंगिकता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। वर्तमान भारतीय वित्तीय और मौद्रिक नीतियों में आंबेडकर की अवधारणाओं का प्रभाव कई आयामों में देखा जा सकता है। इस खंड में हम उन्हें मुख्य बिंदुओं के माध्यम से समझेंगे।

1. मौद्रिक स्थिरता और क्रयशक्ति

आंबेडकर ने स्पष्ट किया कि मुद्रा की अस्थिरता सीधे आर्थिक असमानता और सामाजिक विषमता को जन्म देती है। उन्होंने स्वर्णमान प्रणाली की सीमाओं और रुपया-स्टर्लिंग विनिमय दर की अस्थिरताओं का आलोचनात्मक अध्ययन किया। आज भारत में रिज़र्व बैंक की मौद्रिक नीतियों (मुद्रास्फीति नियंत्रण, रेपो और रिवर्स रेपो दर, कैश रिज़र्व रेशियो, ओपन मार्केट ऑपरेशन) में आंबेडकर की स्थिर मुद्रा की अवधारणा की छाया देखी जा सकती है। विशेष रूप से 2016 के नोटबंदी और डिजिटल भुगतान के बाद, मुद्रा स्थिरता और क्रयशक्ति बनाए रखने के उपाय उनकी दृष्टि की प्रतिध्वनि हैं।

उदाहरण: मुद्रास्फीति नियंत्रण के लिए RBI द्वारा आवश्यक कदम उठाए जा रहे हैं ताकि गरीब और मध्यम वर्ग की क्रयशक्ति प्रभावित न हो। यह वही विचार है जो आंबेडकर ने सामाजिक न्याय की दृष्टि से सुझाया था।

2. वित्तीय समावेशन

आंबेडकर का आर्थिक चिंतन हमेशा वंचित और पिछड़े वर्गों के हितों पर केंद्रित था। उन्होंने देखा कि बिना बैंकिंग और ऋण सुविधाओं के समाज के गरीब वर्ग के पास आर्थिक सशक्तिकरण का साधन नहीं है। स्वतंत्र भारत में बैंकिंग का राष्ट्रीयकरण, ग्रामीण बैंकिंग, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक और लघु वित्त बैंक इसी विचारधारा का

पालन करते हैं। डिजिटल बैंकिंग, जन-धन योजना और डायरेक्ट बेनिफिट ट्रांसफर (DBT) जैसी नीतियाँ वंचित वर्ग को वित्तीय प्रणाली में लाने का प्रयास हैं।

उदाहरण: प्रधानमंत्री जन-धन योजना के तहत करोड़ों लोगों के बैंक खाते खोले गए, जिससे गरीब वर्ग को सीधे सरकारी लाभ और ऋण तक पहुँच मिली। यह वित्तीय समावेशन का आधुनिक रूप है, जिसका बीज आंबेडकर की दृष्टि में निहित है।

3. सामाजिक न्याय और मौद्रिक नीति का संबंध

आंबेडकर का मानना था कि मौद्रिक नीति केवल आर्थिक उपकरण नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय का साधन भी है। मुद्रा की स्थिरता, ऋण की उपलब्धता, और मूल्य नियंत्रण के माध्यम से समाज के पिछड़े वर्गों का कल्याण सुनिश्चित किया जा सकता है। आज के वित्तीय ढाँचे में सब्सिडी योजनाएँ, ग्रामीण ऋण, कृषि बीमा और सामाजिक सुरक्षा नेटवर्क इसी सिद्धांत का प्रत्यक्ष उदाहरण हैं।

उदाहरण: प्रधानमंत्री कृषि बीमा योजना (PMFBY) किसानों को प्राकृतिक आपदाओं से होने वाले नुकसान से सुरक्षा देती है। आंबेडकर ने हमेशा कहा कि कमजोर वर्ग की सुरक्षा और कल्याण मौद्रिक नीति का हिस्सा होना चाहिए।

4. बैंकिंग सुधार और वित्तीय पारदर्शिता

आंबेडकर ने बैंकिंग प्रणाली की जवाबदेही और पारदर्शिता पर जोर दिया। उनका मानना था कि वित्तीय संस्थाएँ यदि कमजोर और असंगठित हों तो समाज का कमजोर वर्ग सबसे अधिक प्रभावित होता है। भारत में बैंकिंग सुधार समितियों (नरसिंहम् रंगराजन) ने आंबेडकर के विचारों की दिशा में काम किया। Non-Performing Assets (NPAs) और बैंकिंग दक्षता के मुद्दों पर सुधार किए गए। डिजिटल बैंकिंग और फिनटेक कंपनियों के माध्यम से वित्तीय लेन-देन पारदर्शी और त्वरित हुआ।

उदाहरण: UPI और BHIM ऐप जैसे डिजिटल प्लेटफॉर्म ने लेन-देन को पारदर्शी और आसान बनाया, जिससे छोटे व्यापारी और गरीब वर्ग लाभान्वित हुए।

5. ग्रामीण और सहकारी बैंकिंग

आंबेडकर ने देखा कि ग्रामीण भारत में ऋण और बैंकिंग की पहुँच बहुत सीमित थी। उन्होंने ग्रामीण और सहकारी ऋण व्यवस्था को सुदृढ़ करने पर जोर दिया। स्वतंत्र भारत में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, सहकारी बैंक और लघु वित्त बैंक इसी दृष्टिकोण का आधुनिक रूप हैं। ये संस्थाएँ कृषि ऋण, सूक्ष्म उद्यम ऋण और ग्रामीण निवेश को बढ़ावा देती हैं।

उदाहरण: NABARD और ग्रामीण बैंकिंग योजनाओं ने किसानों और छोटे उद्यमियों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई।

6. डिजिटल भुगतान और आधुनिक वित्तीय तकनीक

आंबेडकर की स्थिर और समावेशी मुद्रा की अवधारणा आज डिजिटल भुगतान मोबाइल बैंकिंग और फिनटेक के माध्यम से साकार हो रही है। UPI, Aadhaar आधारित भुगतान, डिजिटल वॉलेट और अन्य तकनीकें लोगों के वित्तीय लेन-देन को सरल, सुरक्षित और पारदर्शी बना रही हैं। इससे वित्तीय समावेशन, भ्रष्टाचार में कमी और सरकारी लाभों का त्वरित वितरण संभव हुआ।

उदाहरण: डिजिटलीकृत सब्सिडी, LPG गैस सिलेंडर सब्सिडी सीधे लाभार्थियों के बैंक खाते में ट्रांसफर की जाती है।

7. आर्थिक असमानता और न्यायसंगत विकास

आंबेडकर ने हमेशा आर्थिक असमानता पर चिंता व्यक्त की। उनका मानना था कि केवल आर्थिक वृद्धि पर्याप्त नहीं, बल्कि उसका वितरण न्यायसंगत होना चाहिए। आज भारत में वित्तीय ढाँचे के तहत विभिन्न

कल्याणकारी योजनाएँ, सब्सिडी, शिक्षा और स्वास्थ्य के लिए आर्थिक सहायता, और ग्रामीण निवेश इसी दृष्टि का पालन करते हैं। वित्तीय समावेशन और बैंकिंग प्रणाली के विस्तार से वंचित वर्ग को अवसर मिले हैं।

उदाहरण: महिला सशक्तिकरण और स्वरोजगार के लिए योजनाएँ जैसे PMEGP और Stand-Up India महिलाओं और पिछड़े वर्गों को आर्थिक रूप से सशक्त बनाती हैं।

8. वैश्वीकरण और आंबेडकर के विचार

आंबेडकर ने वैश्विक आर्थिक दबावों और विदेशी मुद्रा नीति पर भी विचार किया था। उनका दृष्टिकोण था कि किसी भी राष्ट्र को अपनी आर्थिक स्वतंत्रता बनाए रखनी चाहिए। आज भारत वैश्विक पूंजी प्रवाह, विदेशी निवेश और अंतरराष्ट्रीय व्यापार के बीच अपनी वित्तीय नीतियों को संतुलित कर रहा है। वित्तीय ढांचा अब वैश्विक प्रभावों के साथ-साथ घरेलू कल्याणकारी उद्देश्यों को भी ध्यान में रखता है।

उदाहरण: FDI नीतियाँ, विदेशी पूंजी निवेश और RBI का विदेशी मुद्रा भंडार प्रबंधन आंबेडकर की “स्थिर और सुदृढ़ मौद्रिक नीति” के विचार से प्रेरित हैं।

9. सामाजिक सुरक्षा और जनकल्याण

आंबेडकर ने आर्थिक नीति को सामाजिक सुरक्षा और जनकल्याण से जोड़ा। उनका दृष्टिकोण था कि राज्य की मौद्रिक और वित्तीय नीतियाँ गरीब, मजदूर और पिछड़े वर्ग के कल्याण को सुनिश्चित करें। आज भारत में पेंशन, स्वास्थ्य बीमा, प्रधानमंत्री सुरक्षा योजनाएँ और गरीबी रेखा के तहत लाभकारी योजनाएँ इसी सोच का परिणाम हैं।

उदाहरण: Atal Pension Yojana और PM-SBY जैसी योजनाएँ समाज के कमजोर वर्गों को आर्थिक सुरक्षा प्रदान करती हैं।

निष्कर्ष

1. डॉ. भीमराव आंबेडकर के आर्थिक और मौद्रिक विचार आज भी प्रासंगिक हैं।
2. उनकी स्थिर मुद्रा, वित्तीय समावेशन और सामाजिक न्याय की अवधारणाएँ भारत के समकालीन वित्तीय ढाँचे में स्पष्ट रूप से देखी जा सकती हैं।
3. बैंकिंग सुधार, ग्रामीण ऋण, डिजिटल भुगतान, जन-धन योजना और कल्याणकारी नीतियाँ उनके विचारों की आधुनिक अभिव्यक्ति हैं।
4. आंबेडकर का दृष्टिकोण यह स्पष्ट करता है कि वित्तीय और मौद्रिक नीति केवल आर्थिक साधन नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय और जनकल्याण का साधन भी हैं।
5. भविष्य में भारतीय वित्तीय और मौद्रिक नीतियों के लिए आंबेडकर के सिद्धांत मार्गदर्शक बने रहेंगे, विशेषकर वित्तीय समावेशन, डिजिटल बैंकिंग और आर्थिक न्याय के क्षेत्र में।

संदर्भ

1. Ambedkar, B.R. (1923). The Problem of the Rupee: Its Origin and Its Solution. Bombay: Thacker & Co.
2. Reserve Bank of India. (2023). Handbook of Statistics on the Indian Economy. Mumbai: RBI Publications.
3. Reserve Bank of India. (2019). Report on Trend and Progress of Banking in India. Mumbai: RBI Publications.
4. Reserve Bank of India. (2015). Monetary Policy Framework and Instruments. Mumbai: RBI Publications.

5. Mehta, J.K. (2008). Financial Inclusion in India: Challenges and Opportunities. New Delhi: Academic Foundation.
6. Singh, V.P. (2012). Indian Banking Sector Reforms: Historical and Contemporary Perspectives. New Delhi: Sage Publications.
7. Rangarajan, C. (2010). Indian Monetary and Financial Policies: Evolution and Reforms. New Delhi: Oxford University Press.
8. Government of India. (2016). Pradhan Mantri Jan-Dhan Yojana – Annual Report. New Delhi: Ministry of Finance.
9. Narasimham, M. (1991). Report of the Committee on Banking Sector Reforms. New Delhi: Government of India.
10. Basu, K. (2011). The Indian Economy: Growth and Challenges. New Delhi: Oxford University Press.
11. Bhattacharya, H. (2017). Digital Payment Systems and Financial Inclusion in India. Mumbai: Routledge India.
12. Patnaik, I. (2008). Monetary Policy in India: Evolution and Current Issues. New Delhi: Academic Foundation.
13. Government of India. (2021). Economic Survey of India. New Delhi: Ministry of Finance.
14. RBI. (2020). Financial Stability Report. Mumbai: Reserve Bank of India.